अध्याय 1

समाजशास्त्र एवं समाज

1

परिचय

हम शुरुआत करते हैं कुछ सुझावों से जो प्राय: आप जैसे युवा विद्यार्थियों के सम्मुख रखे जाते हैं। एक सुझाव प्राय: दिया जाता है कि 'मेहनत से पढ़ाई करोगे तो जीवन में सफल होंगे।' दूसरा सुझाव यह होता है कि 'यदि आप इस विषय अथवा विषयों के समूह की पढ़ाई करेंगे तो भविष्य में अच्छी नौकरी मिलने की ज़्यादा संभावना रहेगी।' तीसरा सुझाव इस प्रकार हो सकता है कि 'किसी लड़के के लिए यह विषय ज़्यादा उपयुक्त नहीं दिखता' अथवा 'एक लड़की के तौर पर क्या आपके विषयों का चुनाव व्यावहारिक है?' चौथा सुझाव, 'आपके परिवार को आपकी नौकरी की शीघ्र आवश्कता है तो ऐसा व्यवसाय न चुनें जिसमें बहुत ज़्यादा समय लगता हो' अथवा 'आपको अपने पारिवारिक व्यवसाय में कार्य करना है तो आप इस विषय को पढ़ने की इच्छा क्यों रखते हैं?'

आइए, हम इन सुझावों पर गौर करें। क्या आप सोचते हैं कि पहला सुझाव बाकी तीन सुझावों का खंडन करता है? क्योंकि पहला सुझाव दर्शाता है कि यदि आप कठिन परिश्रम करेंगे, तो आप अच्छा कार्य करेंगे और अच्छी नौकरी पाएँगे। इसका दारोमदार स्वयं पर है। दूसरा सुझाव यह दर्शाता है कि आपके व्यक्तिगत प्रयास के अलावा नौकरी का एक बाज़ार है और वह बाज़ार यह निश्चित करता है कि किस विषय की पढ़ाई करने से नौकरी के अवसर ज़्यादा हैं या कम है। तीसरा और चौथा सुझाव इस विषय को और भी जटिल बना देता है। यहाँ केवल हमारे व्यक्तिगत प्रयास और नौकरी का बाज़ार ही नहीं बल्कि लिंग, परिवार और सामाजिक परिवेश भी मायने रखते हैं।

यद्यपि व्यक्तिगत प्रयासों का बहुत अधिक महत्त्व है लेकिन यह आवश्यक नहीं कि वे परिणाम को निश्चित करें। जैसाकि हम देखते हैं कुछ अन्य सामाजिक कारक भी हैं जो परिणाम को निर्धारित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हमने केवल 'नौकरी का बाज़ार', 'सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि' एवं 'लिंग' का ज़िक्र किया है। क्या आप अन्य कारकों के बारे में सोच

सकते हैं? हम पूछ सकते हैं, "यह कौन निश्चित करता है कि एक अच्छी नौकरी क्या है?" क्या 'एक अच्छी नौकरी' के बारे में सभी समाजों की सोच एक जैसी है? क्या इसका पैमाना पैसा है? अथवा सम्मान या सामाजिक मान्यता या व्यक्तिगत संतुष्टि, जो एक नौकरी की हैसियत का निर्धारण करते हैं? क्या संस्कृति एवं सामाजिक मानक की भी इसमें कोई भूमिका होती है?

प्रत्येक विद्यार्थी को तरक्की हेतु मेहनत से अध्ययन अवश्य करना चाहिए। लेकिन वह कितना अच्छा कर पाता है यह सामाजिक कारकों के एक पूरे समुच्चय द्वारा निर्धारित होता है। नौकरी का बाज़ार अर्थव्यवस्था की ज़रूरतों से परिभाषित होता है। अर्थव्यवस्था की ज़रूरतें भी पुन: सरकार की आर्थिक एवं राजनीतिक नीतियों पर निर्भर रहती हैं। किसी विद्यार्थी की नौकरी के अवसर इन विशिष्ट राजनीतिक-आर्थिक आँकड़ों के साथ-साथ उसके परिवार की सामाजिक पृष्ठभूमि से भी प्रभावित होते हैं। यहाँ से हमें इस बात का प्रारंभिक ज्ञान मिलता है कि किस प्रकार समाजशास्त्र मानव समाज का एक अंत:संबंधित समग्र के रूप में अध्ययन करता है, और किस तरह समाज और व्यक्ति एक दूसरे से अंत:क्रिया करते हैं। उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में, विषयों के चुनाव की समस्या विद्यार्थी का व्यक्तिगत मामला है। इसके बावजूद अधिकांश विद्यार्थी इस समस्या से प्रभावित रहते हैं, अत: प्रत्यक्ष है कि यह एक व्यापक जनहित का मुद्दा है। समाजशास्त्र का एक कार्य व्यक्तिगत समस्या और जनहित मुद्दे के बीच संबंध को स्पष्ट करना है। यह इस अध्याय की पहली विषय-वस्तु है।

हम यह पहले ही देख चुके हैं कि एक 'अच्छी नौकरी' का अर्थ भिन्न-भिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न है। किसी व्यक्ति के लिए, किसी नौकरी की सामाजिक प्रतिष्ठा कितनी है, अथवा नहीं है यह उस व्यक्ति के 'प्रासंगिक समाज' की संस्कृति पर निर्भर करता है। 'प्रासंगिक समाज' का क्या अर्थ है? क्या इसका अर्थ है वह समाज जिस से वह संबंधित है? व्यक्ति किस समाज से संबंध रखता है? क्या यह पास-पड़ोस है? क्या यह समुदाय है? क्या यह जाति या जनजाति है? क्या यह उसके माता-पिता का व्यापारिक दायरा है? क्या यह राष्ट्र है? इस प्रकार इस अध्याय का दूसरा बिंदु यह है कि वर्तमान समय में व्यक्ति कैसे एक से अधिक समाजों से जुड़ा हुआ है और समाज कैसे असमान होते हैं।

तीसरा, यह अध्याय इसका परिचय देता है कि समाजशास्त्र में समाज का विधिवत अध्ययन किया जाता है। यह अध्ययन दार्शनिक और धार्मिक अनुचिंतन एवं साथ ही समाज के रोज़मर्रा के सामान्य प्रेक्षण से एकदम अलग है। चौथी बात, समाज के अध्ययन का यह अलग तरीका ज़्यादा अच्छी तरह से समझा जा सकता है, यदि हम पीछे मुड़कर बौद्धिक विचारों एवं भौतिक स्थितियों पर ऐतिहासिक दृष्टि डालें जिसमें समाजशास्त्र का जन्म एवं विकास हुआ। ये विचार एवं भौतिक विकास मुख्यत: पाश्चात्य थे परंतु उनके परिणाम विश्वव्यापी थे। पाँचवें, हम इस विश्वव्यापी पक्ष एवं तरीके को देखते हैं जिसमें भारत में समाजशास्त्र का आगमन हुआ। यह याद रखना

महत्त्वपूर्ण है कि जिस प्रकार हम में से प्रत्येक की अपनी अलग एक जीवनी है उसी तरह एक विषय की भी जीवनी है। विषय के इतिहास को समझने से विषय को समझने में सहायता मिलती है। अंत में समाजशास्त्र के विषय क्षेत्र एवं अन्य विषयों से इसके संबंधों की चर्चा की गई है।

2

समाजशास्त्रीय कल्पनाएँ : व्यक्तिगत समस्याएँ एवं जनहित के मुद्दे

हमने अपनी शुरुआत कुछ सुझावों के एक समुच्चय के साथ की थी जिसने हमारा ध्यान इस ओर आकर्षित किया कि व्यक्ति और समाज एक

क्रियाकलाप-1

मिल्स के उद्धरण को ध्यानपूर्वक पढ़ें। तब अगले पृष्ठ पर दिए गए दृश्य और रिर्पोट की जाँच करें। क्या आपने ध्यान दिया कि एक गरीब और गृहविहीन दंपति का दृश्य कैसा है? समाजशास्त्रीय कल्पना गृहविहीनता को समझने और इसकी एक जनहित मुद्दे की तरह व्याख्या करने में सहायता करती है। क्या आप गृहविहीनता के कारणों की पहचान कर सकते हैं? आपकी कक्षा के विभिन्न समूह इसके संभावित कारणों पर सूचनाएँ एकत्र कर सकते हैं। उदाहरणतया; रोज़गार संभावनाएँ, गाँवों से शहरों में प्रवसन आदि। इन पर चर्चा कीजिए। क्या आपने ध्यान दिया कि किस प्रकार राज्य गृहविहीनता को एक जनहित मुद्दे के रूप में लेता है, जिसके लिए इंदिरा आवास योजना सरीखे ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है?

समाजशास्त्रीय कल्पना हमें इतिहास और जीवनकथा को समझने एवं समाज में इन दोनों के संबंध को समझाने में सहायता करती है। यही इसका मुख्य कार्य है और इसका वायदा भी... शायद सबसे अधिक परिणामदायक विभेद जिसके द्वारा समाजशास्त्रीय कल्पना कार्य करती है, वह 'व्यक्तिगत समस्याओं' और 'सामाजिक संरचना के जनहित के मुद्दे' के बीच है... जब किसी को व्यक्तिगत या अपने आस-पास के लोगों के साथ संबंधों में कठिनाइयाँ हो जाती हैं; तब वह उसे स्वयं प्रत्यक्ष व निजी रूप से ज्ञात सीमित सामाजिक दायरे में सुलझाता है... इन मुद्दों का संबंध व्यक्ति के निजी जीवन तथा स्थानीय वातावरण से परे होता है।

समकालीन इतिहास के तथ्य पुरुषों और स्त्रियों की सफलता और असफलता के तथ्य भी हैं। जब एक समाज का औद्योगीकीकरण होता है, एक किसान श्रमिक बन जाता है; एक सामंत समाप्त हो जाता है या व्यवसायी बन जाता है। जब कोई वर्ग उठता है या गिरता है, एक व्यक्ति रोज़गार युक्त अथवा बेरोज़गार हो जाता है; जब विनियोग की दर ऊपर-नीचे जाती है, आदमी का मन उछलता है या टूट जाता है। जब युद्ध होता है, एक बीमा एजेंट रॉकेटलांचर बन जाता है; एक स्टोर का क्लर्क राडार मैन बन जाता है; एक पत्नी अकेली रह जाती है; एक बालक पिता के बगैर बड़ा होता है। एक व्यक्ति की ज़िंदगी हो या एक समाज का इतिहास, दोनों को जाने बिना समझा नहीं जा सकता है... (मिल्स 1959)।

एक गृहविहीन दंपति

वर्ष 1999-2000 से आरंभ हुई इंदिरा आवास योजना सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय (एम.ओ.आर.डी.) तथा भवन एवं शहरी विकास निगम (हुडको) द्वारा संचालित एक विशाल योजना है, जो गरीब और गृहविहीन लोगों के लिए मुफ़्त आवास मुहैया कराएगी। क्या आप ऐसे अन्य मुद्दे बता सकते हैं जो व्यक्तिगत समस्याओं और जनहित के मुद्दों में संबंध दर्शाते हैं?

दूसरे से परस्पर किस प्रकार संबंधित हैं। यह एक ऐसा बिंदु है जिस पर समाजशास्त्री पीढ़ियों से विचार विमर्श करते आ रहे हैं। सी. राइट मिल्स समाजशास्त्रीय कल्पनाओं पर अपनी दृष्टि मुख्यतः इस बात को सुलझाने पर टिकाते हैं कि किस तरह व्यक्तिगत और जनहित परस्पर संबंधित हैं।

3

समाजों में बहुलताएँ एवं असमानताएँ

समकालीन विश्व में, एक प्रकार से देखा जाए तो हम एक से ज़्यादा 'समाजों' से जुड़े हुए हैं। जब हम विदेशियों के बीच 'हमारे समाज' की बात करते है तो हमारा मतलब 'भारतीय समाज' से हो सकता है लेकिन भारतीयों के बीच 'हमारे समाज' को भाषा, समुदाय, धर्म या जाति अथवा जनजाति के संदर्भ में भी लिया जा सकता है।

यह विविधता इस बात का निर्णय करने में कठिनाई पैदा करती है कि हम किस समाज की बात कर रहे हैं। लेकिन शायद लगता है कि समाजों का खाका खींचने की समस्या अकेले समाजशास्त्रियों की ही नहीं है, जैसा कि नीचे दी गई टिप्पणी से प्रकट होता है।

अपनी फ़िल्मों में क्या दिखाया जाए इस पर चर्चा करते हुए मशहूर भारतीय फ़िल्मकार सत्यजित राय हैरानी से कहते हैं–

> आप अपनी फ़िल्मों में क्या रखेंगे? आप क्या छोड़ सकते हैं? क्या आप शहर को पीछे छोड़कर गाँव में जाएँगे जहाँ विशाल चारागाहों में गायें चरती हैं और चरवाहे बाँसुरी बजाते हैं? आप यहाँ एक साफ़-सुथरी एवं ताज़ातरीन फ़िल्म बना सकते हैं जिसमें एक नाविक के गीतों की सी मोहक लय होगी।
>
> अथवा आप इतिहास में पीछे महाकाव्यों में जाएँगे, जहाँ दैत्यों और देवों ने महान संग्राम में

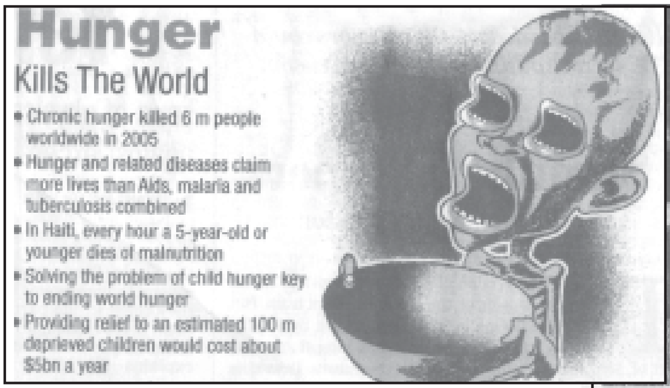

Hunger
Kills The World

- Chronic hunger killed 6 m people worldwide in 2005
- Hunger and related diseases claim more lives than Aids, malaria and tuberculosis combined
- In Haiti, every hour a 5-year-old or younger dies of malnutrition
- Solving the problem of child hunger key to ending world hunger
- Providing relief to an estimated 100 m deprieved children would cost about $5bn a year

Bust that fat...

India is ranked amongst the top ten obese countries in the world. And what's startling is that Delhiites like to gorge on food that leads to weight-related problems.

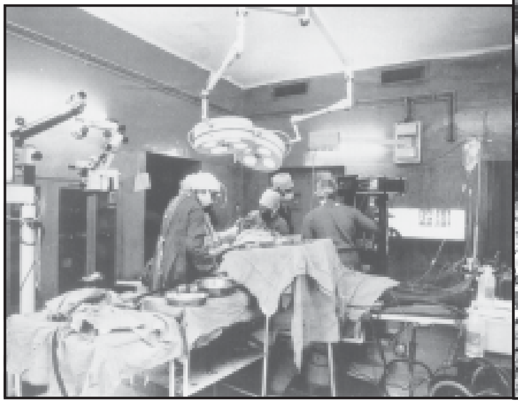

दृश्यों पर चर्चा कीजिए
ये किस प्रकार की बहुलताएँ और असमानताएँ दर्शाते हैं?

हिस्सा लिया था, जिसमें भाइयों ने भाइयों का संहार किया था...

अथवा आप वहीं ठहरे रहेंगे जहाँ आप हैं, वर्तमान में, यहीं इसी विकट, भीड़-भाड़, चकाचौंध भरे शहर के बीचों-बीच और इसके कोलाहल और दृश्यों और परिवेश के विरोधाभासों से स्वर मिलाने का प्रयास करेंगे?

यह समाजशास्त्र के सम्मुख मुख्य प्रश्न है कि समाज में किस चीज़ पर ध्यान केंद्रित किया जाए। हम सत्यजित राय की टिप्पणी पर पुनः जाते हैं तो स्तब्ध होते हैं कि क्या उनके द्वारा किया गया गाँव का चित्रण रोमांटिक है? एक समाजशास्त्री के नज़रिए से गाँव के एक दलित के नीचे दिए गए चित्रण की इससे तुलना करना उल्लेखनीय होगा–

जब मैंने उसे पहली बार देखा वह गाँव की छप्पर की छत वाली चाय की दुकान के सामने धूल भरी सड़क पर बैठा था, जानबूझकर अपना गिलास और प्लेट अपने बगल में रखे हुए जो दुकानदार के लिए मूक संकेत था कि अछूत को चाय खरीदनी है। मुली एक 40 वर्षीय पान से मैले हुए दाँतों वाला मरियल-सा व्यक्ति था जिसके लंबे बाल पीछे की तरफ़ लटके हुए थे (फ्रीमैन 1978)।

क्रियाकलाप-2

भारत सरकार का आर्थिक सर्वेक्षण बताता है कि सफ़ाई सुविधाएँ सिर्फ़ 28 प्रतिशत लोगों को प्राप्त हैं। सामाजिक असमानता के अन्य संकेतकों मसलन शिक्षा, स्वास्थ्य, रोज़गार इत्यादि के बारे में मालूम कीजिए।

अमर्त्य सेन का उद्धरण शायद इसका ज़्यादा अच्छी तरह वर्णन करेगा कि किस प्रकार असमानता समाजों के बीच केंद्रीय बिंदु है–

कुछ भारतीय अमीर हैं, अधिकांश नहीं हैं। कुछ बहुत अच्छी तरह शिक्षित हैं; अन्य निरक्षर है। कुछ विलासिता की ज़िंदगी बसर करते हैं, जबकि दूसरे थोड़े से पारिश्रमिक के बदले कठोर परिश्रम करते हैं। कुछ राजनीतिक रूप से शक्तिशाली होते हैं; लेकिन दूसरे किसी भी चीज़ को प्रभावित नहीं कर सकते। कुछ के पास ज़िंदगी में आगे बढ़ने के लिए अनेक अवसर हैं; जबकि अन्य के पास अवसरों का नितांत अभाव है। कुछ के प्रति पुलिस का व्यवहार सम्मानजनक रहता है; जबकि अन्य कुछ के लिए अत्यधिक असम्मानजनक। ये असमानता के कुछ विभिन्न प्रकार हैं और इनमें से प्रत्येक के लिए गंभीर चिंतन की आवश्यकता है (अमर्त्य सेन 2005 : 210-11)।

4

समाजशास्त्र का परिचय

समाज का एक अंत:संबंधित समग्र के रूप में अध्ययन करने के समाजशास्त्र के मुख्य सरोकार एवं समाजशास्त्रीय कल्पनाओं के बारे में आपको पहले ही परिचय दिया जा चुका है। व्यक्तिगत पसंद और नौकरी के बाज़ार पर हमारी परिचर्चा से पता चलता है कि किस प्रकार आर्थिक, राजनीतिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक संस्थाएँ अंत:संबंधित हैं और किस प्रकार एक व्यक्ति इससे बँधा हुआ भी है तथापि कुछ सीमा

तक इसको बदल भी सकता है। अगले कुछ अध्याय विभिन्न संस्थाओं और साथ ही साथ संस्कृति पर आधारित होंगे। ये समाजशास्त्र की कुछ प्रमुख शब्दावली एवं संकल्पनाओं पर भी केंद्रित होंगे, जिससे समाज को समझने में आपको मदद मिलेगी क्योंकि समाजशास्त्र मनुष्य के सामाजिक जीवन, समूहों और समाजों का अध्ययन है। इसकी विषय-वस्तु है एक सामाजिक प्राणी की तरह स्वयं हमारा व्यवहार।

समाजशास्त्र ऐसा कार्य करने वाला पहला विषय नहीं है। लोगों ने हमेशा से उस समाज और समूह को देखा और समझा है जिसमें वे रहते हैं। यह सभी सभ्यताओं और युगों के दार्शनिकों, धार्मिक गुरुओं और विधिवेत्ताओं की पुस्तकों से स्पष्ट होता है। अपने जीवन और अपने समाज के बारे में सोचने वाला मानव स्वभाव केवल दार्शनिकों एवं सामाजिक विचारकों तक सीमित नहीं है। हम सभी के अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी के बारे में और दूसरों की ज़िंदगी के बारे में भी अपने-अपने विचार रहते हैं और इसी तरह अपने समाज और दूसरे समाजों के बारे में भी। ये रोज़ाना की हमारी धारणाएँ और हमारी सामान्य बौद्धिक समझ ही है जिसके अनुसार हम अपना जीवन जीते हैं। तो भी एक विषय के रूप में समाजशास्त्र का एक समाज के बारे में प्रेक्षण एवं विचार दार्शनिक अनुचिंतनों एवं सामान्य बौद्धिक समझ से हटकर है।

मानव व्यवहार में क्या नैतिक है और क्या अनैतिक, रहन-सहन के वांछित तरीके एवं एक अच्छे समाज के बारे में दार्शनिक तथा धार्मिक विचारक अकसर निरीक्षण करते रहते हैं। समाजशास्त्र का सरोकार भी मानकों एवं मूल्यों के प्रति है। लेकिन इसकी मुख्य दृष्टि इन मानकों एवं मूल्यों से परे उन उद्देश्यों पर है जिसका लोगों को अनुसरण करना चाहिए। इसका सरोकार उस तरीके से है जिसके तहत वे वास्तविक समाजों में कार्य करते हैं। (अध्याय 3 में आप देखेंगे कि किस प्रकार धर्म का समाजशास्त्र ईश्वरमीमांसीय अध्ययन से अलग है)। समाजों का आनुभविक अध्ययन समाजशास्त्रियों के कार्य का एक अहम हिस्सा हैं। लेकिन इस बात का यह अर्थ कदापि नहीं है कि समाजशास्त्र का मूल्यों के प्रति कोई सरोकार नहीं है। इसका तात्पर्य केवल यह है कि जब एक समाजशास्त्री एक समाज का अध्ययन करता है तब वह जानकारियाँ इकट्ठा करने और प्रेक्षण करने को उत्सुक होता है, चाहे वह उसकी निजी पसंद के प्रतिकूल हो।

इसको स्पष्ट करने के लिए पीटर बर्जर एक असामान्य लेकिन प्रभावकारी तुलना पेश करते हैं—

> किसी राजनीतिक या सैनिक संघर्ष में विरोधी पक्ष के जासूसी तंत्र द्वारा इस्तेमाल की गई सूचनाओं को हथियाना काफ़ी फ़ायदेमंद होता है। लेकिन इसका कारण यही है कि एक सफल जासूसी तंत्र की सूचनाएँ पूर्वाग्रहों से मुक्त होती हैं। यदि कोई जासूस अपनी रिपोर्टिंग अपने अधिकारियों की विचारधारा एवं महत्त्वाकांक्षाओं को ध्यान में रखकर करता है तो उसकी रिपोर्ट न सिर्फ़ अपने पक्ष के लिए अनुपयोगी होगी बल्कि विरोधी पक्ष के लिए भी, यदि वह उसे हथियाना चाहे... एक समाजशास्त्री भी काफ़ी

मायने में ऐसा ही एक जासूस है। उसका काम है किसी भी निश्चित क्षेत्र में अधिक से अधिक शुद्ध रिपोर्ट तैयार करना, जितना कि वह कर सकता है (बर्जर 1963 :16–17)।

क्या इसका यह अर्थ निकलता है कि समाजशास्त्री की अपने अध्ययन के उद्देश्यों के बारे में जानने अथवा उस काम के प्रति, जिसके लिए समाजशास्त्रीय जानकारियाँ जुटाई जा रही हैं, कोई सामाजिक ज़िम्मेदारी नहीं है? उसकी ज़िम्मेदारी भी उतनी ही है जितनी समाज के एक नागरिक की होती हैं। लेकिन यह पूछताछ समाजशास्त्रीय पूछताछ नहीं है। यह तो एक जीवविज्ञानी के जैविकीय ज्ञान की तरह है जिसका उपयोग या तो स्वस्थ करने के लिए या खत्म करने के लिए किया जा सकता है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि जीवविज्ञानी उस ज़िम्मेदारी से मुक्त है जिसके लिए वह कार्य कर रहा है। परंतु यह एक जैविकीय प्रश्न नहीं है।

समाजशास्त्र अपने आरंभिक काल से ही स्वयं को विज्ञान की तरह समझता है। समाजशास्त्र प्रचलित सामान्य बौद्धिक प्रेक्षणों या दार्शनिक अनुचिंतनों या ईश्वरवादी व्याख्यानों से हटकर वैज्ञानिक कार्यविधियों से बँधा हुआ है। इसका अर्थ है कि जिन कथनों पर समाजशास्त्री पहुँचता है वह कथन साक्ष्य के निश्चित नियमों के प्रेक्षणों द्वारा प्राप्त किए हुए होने चाहिए ताकि दूसरे व्यक्ति उनकी जाँच कर सकें या उनकी जानकारियों के विकास हेतु उन्हें दोहरा सकें। समाजशास्त्र में प्राकृतिक विज्ञान तथा मानवविज्ञान के अंतर पर और परिमाणात्मक तथा गुणात्मक अनुसंधानों के अंतर पर पर्याप्त बहस हो चुकी है। हमें यहाँ इस विवाद में नहीं पड़ना हैं। लेकिन यहाँ जो बात प्रासंगिक है, वह यह है कि समाजशास्त्र को अपने प्रेक्षणों और विश्लेषणों में कुछ निश्चित नियमों का पालन करना होता है ताकि दूसरों के द्वारा उसकी जाँच की जा सके। अगले खंड में हम समाजशास्त्रीय ज्ञान और सामान्य बौद्धिक ज्ञान की तुलना करने जा रहे हैं जो एक बार फिर इस बात पर बल देता है कि समाजशास्त्र जिस तरह से समाज का प्रेक्षण करता है उसमें पद्धतियों की भूमिका, प्रक्रियाएँ और नियमों का कितना महत्त्व है। इस पाठ्यपुस्तक का 5वाँ अध्याय आपको बताएगा कि समाजशास्त्री क्या करते हैं और वे किस तरह समाज का अध्ययन करते हैं। समाजशास्त्र और सामान्य बौद्धिक ज्ञान के बीच के अंतरों का विस्तृत वर्णन समाजशास्त्रीय उपागम एवं पद्धति के बारे में एक स्पष्ट विचार देने में सहायता करेगा।

5

समाजशास्त्र और सामान्य बौद्धिक ज्ञान

हम देख चुके हैं कि किस तरह समाजशास्त्रीय ज्ञान ईश्वरमीमांसीय और दार्शनिक प्रेक्षणों से अलग है। इसी प्रकार समाजशास्त्र सामान्य बौद्धिक प्रेक्षणों से अलग है। सामान्य बौद्धिक वर्णन सामान्यत: उन पर आधारित होते हैं जिन्हें हम प्रकृतिवादी और/या व्यक्तिवादी वर्णन कह सकते हैं। व्यवहार का एक प्रकृतिवादी वर्णन इस मान्यता पर निर्भर करता है कि एक

क्रियाकलाप-3

गरीबी का एक उदाहरण नीचे दिया गया है और हमने गृहविहीन व्यक्तियों वाली अपनी चर्चा में भी इस बात का हलका-सा उल्लेख किया है। आप अन्य मुद्दों के बारे में सोचें कि वे प्रकृतिवादी और समाजशास्त्री तरीके से कैसे वर्णित किए जा सकते हैं।

व्यक्ति व्यवहार के 'प्राकृतिक' कारणों की पहचान कर सकता है।

अतः समाजशास्त्र सामान्य बौद्धिक प्रेक्षणों एवं विचारों तथा साथ ही साथ दार्शनिक विचारों दोनों से ही अलग है। यह हमेशा या सामान्यतः भी चमत्कारिक परिणाम नहीं देता। लेकिन अर्थपूर्ण और असंदिग्ध संपर्कों तक केवल सामान्य संपर्कों की छानबीन द्वारा ही पहुँचा जा सकता है। समाजशास्त्रीय ज्ञान में बहुत अधिक प्रगति हुई है ज़्यादा प्रगति तो सामान्य रूप से हुई परंतु कभी-कभार नाटकीय उद्‌भवों से भी प्रगति हुई है।

समाजशास्त्र में संकल्पनाओं, पद्धतियों और आँकड़ों का एक पूरा तंत्र है। इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता कि यह किस तरह संयोजित है। यह सामान्य बौद्धिक ज्ञान से प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता। सामान्य बौद्धिक ज्ञान अपरावर्तनीय

व्याख्या	प्रकृतिवादी	समाजशास्त्रीय
गरीबी	लोग गरीब इसलिए हैं क्योंकि वे काम से जी चुराते हैं, 'समस्याग्रस्त परिवारों' से आते हैं, परिवार का उचित बजट बनाने में अयोग्य हैं, बुद्धिमत्ता की कमी है एवं कार्य के लिए स्थानांतरण से डरते हैं।	समकालीन गरीबी का कारण वर्ग समाज में असमानता की संरचना है और वे लोग इससे ज़्यादा प्रभावित होते हैं जिनकी कार्य की अनियमितता दीर्घकालिक एवं मज़दूरी कम है (जयराम 1987:3)।

असंदिग्ध संपर्क?

बहुत से समाजों में, जिसमें भारत के बहुत सारे भाग भी शामिल हैं, उत्तराधिकार और वंशानुक्रम की रेखा पिता से पुत्र को जाती है। इसे पितृवंशीय व्यवस्था के रूप में जाना जाता है। इसे ध्यान में रखते हुए कि औरतों को संपत्ति में अधिकार मिलने की प्रवृत्ति अत्यधिक क्षीण है, भारत सरकार ने कारगिल युद्ध के बाद यह निर्णय किया कि भारतीय सैनिकों की मृत्यु पर मिलने वाली क्षतिपूर्ति की धनराशि उनकी विधवाओं को मिलनी चाहिए।

निश्चित रूप से सरकार ने इस फ़ैसले के अवांछित परिणामों का पूर्वानुमान नहीं लगाया। इस कारण बहुत सी विधवाओं को अपने देवरों (पति के भाइयों) के साथ शादी करने के लिए मज़बूर किया गया। कुछ मामलों में वह देवर (बाद में पति) अल्पवयस्क था जबकि भाभी (बाद में पत्नी) युवती थी। यह इस बात को निश्चित करने के लिए होता था कि क्षतिपूर्ति की धनराशि मृतक के परिवार में ही रहे। क्या आप इस तरह के अवांछित परिणाम वाले किसी अन्य सामाजिक कार्य अथवा ऐसे ही किसी शासकीय फ़ैसले के बारे में सोच सकते हैं?

है क्योंकि यह अपने उद्गम के बारे में कोई प्रश्न नहीं पूछता है। या दूसरे शब्दों में यह अपने आप से यह नहीं पूछता–"मैं यह विचार क्यों रखता हूँ?" एक समाजशास्त्री को अपने स्वयं के बारे में तथा अपने किसी भी विश्वास के बारे में प्रश्न पूछने के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए, चाहे वह विश्वास कितना भी प्रिय क्यों न हो–"क्या वास्तव में ऐसा है?" समाजशास्त्र के दोनों ही उपागम, व्यवस्थित एवं प्रश्नकारी, वैज्ञानिक खोज की एक विस्तृत परंपरा से निकले हैं। वैज्ञानिक कार्यविधियों के इस महत्त्व को तभी समझा जा सकता है, जब हम अतीत की तरफ़ लौटें और उस समय की सामाजिक परिस्थिति को समझें जिसमें समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण का उद्भव हुआ था, क्योंकि आधुनिक विज्ञान में हुए विकासों का समाजशास्त्र पर गहरा प्रभाव पड़ा था। चलिए हम संक्षिप्त रूप में देखें कि समाजशास्त्र की रचना में बौद्धिक विचारों की भूमिका कहाँ तक है।

6

बौद्धिक विचार जिनकी समाजशास्त्र की रचना में भूमिका है

प्राकृतिक विकास के वैज्ञानिक सिद्धांतों और प्राचीन यात्रियों द्वारा पूर्व आधुनिक सभ्यताओं की खोज से प्रभावित होकर उपनिवेशी प्रशासकों, समाजशास्त्रियों एवं सामाजिक मानवविज्ञानियों ने समाजों के बारे में इस दृष्टिकोण से विचार किया कि उनका विभिन्न प्रकारों में वर्गीकरण किया जाए ताकि सामाजिक विकास के विभिन्न चरणों को पहचाना जा सके। ये लक्षण उन्नीसवीं शताब्दी में आरंभिक समाजशास्त्रियों जैसे आगस्त कोंत, कार्ल मार्क्स एवं हरबर्ट स्पेंसर के कार्यों में पुन: दृष्टिगोचर होते हैं। अत: इस बात के प्रयास किए गए कि उन बातों के आधार पर विभिन्न तरह के समाजों का वर्गीकरण किया जाए। उदाहरण के लिए–

- आधुनिक काल से पहले के समाजों के प्रकार, जैसे शिकारी टोलियाँ एवं संग्रहकर्ता, चरवाहे एवं कृषक, कृषक एवं गैर-औद्योगिक सभ्यताएँ।
- आधुनिक समाजों के प्रकार, जैसे औद्योगीकृत समाज।

इस प्रकार के क्रमिक विकास का दर्शन यह मानता था कि पश्चिमी संसार आवश्यक रूप से ज़्यादा प्रगतिशील एवं सभ्य था। गैर-पश्चिमी समाज को अशिष्ट और कम विकसित समझा जाता था। भारतीय औपनिवेशिक अनुभव को भी इसी दृष्टि से देखा जाना चाहिए। भारतीय समाजशास्त्र में भी इसी तरह के तनाव को देखा जा सकता है 'बहुत पीछे इतिहास में अंग्रेज़ी उपनिवेशवाद के समय में जाइए और इसका बुद्धिजीवी तथा सिद्धांतवादी जवाब हैं...' (सिंह 2004:19)। शायद इसी पृष्ठभूमि के कारण ही भारतीय समाजशास्त्र खासतौर पर विचारशील रहा है और यही इसके व्यवहार में भी दिखता है (चौधरी 2003)। अगली पुस्तक 'समाज का बोध' (एन.सी.ई.आर.टी., 2006) में आप भारतीय समाजशास्त्रीय विचार, उसके सरोकारों और इसके वास्तविक व्यवहार के बारे में विस्तार से जानेंगे।

डार्विन के जीव विकास के विचारों का आरंभिक समाजशास्त्रीय विचारों पर दृढ़ प्रभाव

था। समाज की प्राय: जीवित जैववाद से तुलना की जाती थी और इसके क्रमबद्ध विकास को चरणों में तलाशने के प्रयास किए जाते थे जिनकी जैविकी जीवन से तुलना की जा सकती थी। समाज को व्यवस्था के भागों के रूप में देखने के तरीके ने, जिसमें प्रत्येक भाग एक खास कार्य निष्पादन में रत हो, सामाजिक संस्थाओं, जैसे परिवार या स्कूल एवं संरचनाओं जैसे स्तरीकरण के अध्ययन को बहुत प्रभावित किया। इसकी चर्चा हमने यहाँ इसलिए की है क्योंकि उन बौद्धिक विचारों का, जिनकी समाजशास्त्र की रचना में महत्त्वपूर्ण भूमिका है, इससे गहरा संबंध है कि किस प्रकार समाजशास्त्र आनुभविक वास्तविकता का अध्ययन करता है।

ज्ञानोदय, एक यूरोपीय बौद्धिक आंदोलन जो सत्रहवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों एवं अट्ठारहवीं शताब्दी में चला, कारण और व्यक्तिवाद पर बल देता है। उस वक्त वैज्ञानिक जानकारी भी उन्नत अवस्था में थी और साथ ही एक बढ़ता दृढ़ विश्वास यह भी था कि प्राकृतिक विज्ञानों की पद्धतियों द्वारा मानवीय पहलुओं का अध्ययन किया जा सकता है और करना भी चाहिए। उदाहरणार्थ; गरीबी, जो अभी तक एक 'प्राकृतिक प्रक्रिया' के रूप में जानी जाती थी, उसे 'सामाजिक समस्या' के रूप में देखना आरंभ हुआ, जो कि मानवीय उपेक्षा अथवा शोषण का परिणाम है। इसलिए गरीबी को समझा जा सकता है और उसका निराकरण हो सकता है। इसके अध्ययन का एक तरीका यह था कि एक सामाजिक सर्वेक्षण किया जाए और यह इस विश्वास पर आधारित था कि मानवीय प्रक्रियाओं को मापा जा सकता है और इनका वर्गीकरण किया जा सकता है। सामाजिक सर्वेक्षण के बारे में चर्चा 5वें अध्याय में की जाएगी।

प्रारंभिक आधुनिक काल के विचारक इस बात से सहमत थे कि ज्ञान में वृद्धि से सभी सामाजिक बुराइयों का समाधान संभव है। उदाहरण के तौर पर फ्रांसीसी विद्वान आगस्त कोंत, (1789-1857) जिनको कि समाजशास्त्र का संस्थापक समझा जाता है, का विश्वास था कि समाजशास्त्र मानव कल्याण में योगदान करेगा।

7

भौतिक मुद्दे जिनकी समाजशास्त्र की रचना में भूमिका है

औद्योगिक क्रांति एक नए गतिशील आर्थिक क्रियाकलाप—पूँजीवाद पर आधारित थी। औद्योगिक उत्पादन की उन्नति के पीछे यही पूँजीवादी व्यवस्था एक प्रमुख शाक्ति थी। पूँजीवाद में नयी अभिवृत्तियाँ एवं संस्थाएँ सम्मिलित थीं। उद्यमी निश्चित और व्यवस्थित मुनाफ़े की आशा से प्रेरित थे। बाज़ारों ने उत्पादनकारी जीवन में प्रमुख साधन की भूमिका अदा की। और माल, सेवाएँ एवं श्रम वस्तुएँ बन गईं जिनका निर्धारण तार्किक गणनाओं के द्वारा होता था।

नयी अर्थव्यवस्था पहले वाली अर्थव्यवस्था से एकदम अलग थी। इंग्लैंड औद्योगिक क्रांति का केंद्र था। औद्योगीकरण द्वारा आया परिवर्तन कितना असरकारी था इसे समझने के लिए हम औद्योगीकरण से पूर्व की इंग्लैंड की ज़िंदगी पर सरसरी नज़र डालते हैं। औद्योगीकरण से पहले, अंग्रेज़ों का मुख्य पेशा खेती करना एवं कपड़ा

आस-पड़ोस के कामकाजी वर्ग से गंदी बस्तियों तक

बनाना था। अधिकांश लोग गाँवों में रहते थे। अपने भारतीय गाँवों की तरह ही वहाँ भी कृषक एवं भू-स्वामी, लोहार एवं चमड़ा श्रमिक, जुलाहे एवं कुम्हार, चरवाहे और मद्यनिर्माता थे। समाज छोटा था। यह स्तरीकृत था अर्थात विभिन्न लोगों की प्रस्थिति एवं उनकी वर्ग स्थिति स्पष्ट परिभाषित थी। सभी परंपरागत समाजों की तरह यह भी नज़दीकी आपसी व्यवहार की विशेषता रखता था। औद्योगीकरण के साथ ही सभी विशेषताएँ बदल गईं।

नयी व्यवस्था का एक प्रमुख मूल पक्ष था श्रम की प्रतिष्ठा कम होना, शिल्प संघ, गाँव एवं परिवार के सुरक्षित स्थानों से कार्य का अलग होना। रूढ़िवादी एवं परिवर्तनवादी दोनों ही तरह के चिंतक सामान्य श्रमिकों की प्रस्थिति की गिरावट को देखकर भयभीत थे, परंतु कुशल कारीगरों की स्थिति अलग थी।

नगरीय केंद्रों का विकास और विस्तार हुआ। ऐसा नहीं था कि पहले शहर नहीं थे। लेकिन औद्योगीकरण से पहले उनका स्वरूप अलग था। औद्योगिक शहरों ने एक बिलकुल नए नगरीय संसार को जन्म दिया। इसकी निशानी थी फ़ैक्ट्रियों का धुआँ और कालिख, नयी औद्योगिक श्रमिक वर्ग की भीड़भाड़ वाली बस्तियाँ, गंदगी और सफ़ाई का नितांत अभाव। इसकी अन्य निशानियों में एक था नए प्रकार की सामाजिक अंत:क्रिया।

एक हिंदी फिल्म का गीत आगे दिया गया है। फ़िल्म *सी.आई.डी.* (1956) का यह गीत शहरी ज़िंदगी के भौतिक एवं अनुभवात्मक पक्षों का चित्रण इस प्रकार करता है–

ऐ दिल है मुश्किल जीना यहाँ,
ज़रा हट के, ज़रा बच के,
ये है बॉम्बे मेरी जान।
कहीं बिल्डिंग, कहीं ट्रामें,
कहीं मोटर, कहीं मिल,
मिलता है यहाँ सब कुछ,
इक मिलता नहीं दिल,
इंसान का नहीं कहीं नाम-ओ-निशाँ।
कहीं सत्ता, कहीं पत्ता,
कहीं चोरी, कहीं रेस,
कहीं डाका, कहीं फाका,
कहीं ठोकर, कहीं ठेस,
बेकारों का है क्या काम यहाँ!
बेघर को आवारा यहाँ कहते हँस-हँस,
खुद काटें गले सबके, कहें इसको बिज़नेस,
इक चीज़ के हैं कई नाम यहाँ।
गीता : बुरा दुनिया वो है कहता
ऐसा भोला तू ना बन
जो है करता, वो है भरता,
है यहाँ का ये चलन।

भावानुवाद : प्यारे दिल, यहाँ ज़िंदगी मुश्किल है, अगर तुम खुद को बचाना चाहते हो तो तुम्हें देखना पड़ेगा कि तुम किस रास्ते पर जा रहे हो। मेरे प्यारे यह मुंबई है! तुम्हें यहाँ बहुमंज़िली इमारतें मिलेंगी, ट्रामें मिलेंगी, वाहन मिलेंगे, कारखाने मिलेंगे, इंसानियत भरे दिल को छोड़कर तुम्हें यहाँ सब कुछ मिलेगा। इंसानियत का यहाँ कोई नामो निशान नहीं हैं। यहाँ पर जो भी करें उसका कोई मतलब नहीं है। शक्ति या पैसा या चोरी या विश्वासघात ही

क्रियाकलाप-4

ध्यान दें कि औद्योगिक क्रांति को प्रारंभ करने वाला देश ब्रिटेन, कितनी शीघ्रता से ग्रामीण समाज से शहरी समाज में परिवर्तित हो गया। क्या भारत में भी इसी तरह की प्रक्रिया थी?

1810: 20 प्रतिशत जनसंख्या कस्बों तथा शहरों में रहती थी।
1910: 80 प्रतिशत जनसंख्या कस्बों तथा शहरों में रहती थी।

इस प्रक्रिया का भारत में एक अलग तरह का प्रभाव था। शहरी केंद्र तो बढ़े परंतु ब्रिटिश निर्मित वस्तुओं के प्रवेश के साथ अधिकांश लोग कृषि क्षेत्र की तरफ़ उन्मुख हुए।

यहाँ चलता है। अमीर लोग गृहविहीन लोगों की आवारा व्यक्तियों की तरह हँसी उड़ाते हैं, लेकिन जब वह एक दूसरे के गले काटते हैं, तब उसे व्यापार कहते हैं। यहाँ इस एक कार्य को कई नाम दिए गए हैं।

> अंग्रेज़ी कारखानों के मशीनों द्वारा तैयार माल के आगमन से भारी तादाद में भारतीय दस्तकार बरबाद हो गए क्योंकि अत्यधिक विकसित कारखानों में उनकी खपत नहीं हो सकती थी। इन बरबाद दस्तकारों ने मुख्यत: जीवन निर्वाह के लिए खेती को अपना लिया (देसाई 1975:70)।

कारखाना और इसके यांत्रिकी श्रम विभाजन को अकसर किसानों, दस्तकारों, साथ-ही-साथ परिवार और स्थानीय समुदायों को जान-बूझ कर खत्म करने की कोशिश के रूप में देखा जाता था। कारखाने को एक आर्थिक कठोर नियंत्रण के रूप में देखा गया जो अभी तक बैरकों और जेलों तक था। कुछ के अनुसार जैसे मार्क्स, कारखाना दमनकारी था। फिर भी काफ़ी हद तक स्वतंत्रता की गुजांइश थी। यहाँ श्रमिकों ने बेहतर ज़िंदगी हेतु सामूहिक कार्य प्रणाली एवं संगठित प्रयास, दोनों चीज़ें सीखीं।

नए समाजों के उभरने का एक और संकेतक था घड़ी के अनुसार समय का महत्त्व जो सामाजिक संगठन का आधार भी था। इसका एक महत्त्वपूर्ण पक्ष वह तरीका था जिसके अनुसार अट्ठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में खेतिहर और औद्योगिक मज़दूरों की बढ़ती संख्या ने तेज़ी से घड़ी और कैलेंडर के अनुसार अपने को ढालना शुरू किया जो आधुनिक समय से पूर्व के काम के तरीके से एकदम भिन्न था। औद्योगिक पूँजीवाद के विकास से पहले काम की लय दिन के उजाले और जीतोड़ परिश्रम के बीच आराम या सामाजिक कर्तव्यों के आधार पर तय होती थी। कारखानों के उत्पादन ने श्रम को समकालिक बना दिया। इससे समय की पाबंदी, एक तरह की स्थिर रफ़्तार, कार्य करने के निश्चित घंटे और हफ़्ते के दिन निर्धारित हो गए। इसके अलावा घड़ी ने कार्य करने की अनिवार्यता पैदा कर दी। नियोक्ता और कर्मचारी

क्रियाकलाप-5

मालूम कीजिए कि किसी परंपरागत गाँव, कारखाने और कॉल सेंटर में कार्य किस प्रकार नियोजित किया जाता है।

क्रियाकलाप-6

मालूम कीजिए कि किस प्रकार औद्योगिक पूँजीवाद ने गाँवों और शहरों में भारतीय जन-जीवन को बदल डाला है।

दोनों के लिए 'समय अब धन है: यह व्यतीत नहीं होता बल्कि खर्च हो जाता है।'

8

हमें यूरोप में समाजशास्त्र के आरंभ और विकास को क्यों पढ़ना चाहिए?

समाजशास्त्र के अधिकांश मुद्दे एवं सरोकार भी उस समय की बात करते हैं जब यूरोपियन समाज अट्ठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में औद्योगीकरण और पूँजीवाद के आगमन के कारण भयंकर रूप से परिवर्तन की चपेट में था। बहुत से मुद्दे जो उस समय प्राय: उठते थे, उदाहरण के लिए, शहरीकरण या कारखानों के उत्पादन, सभी आधुनिक समाजों के लिए प्रासंगिक थे, यद्यपि उनकी कुछ विशेषताएँ थोड़ी अलग हो सकती थीं। वास्तव में, भारतीय समाज अपने औपनिवेशिक अतीत और अविश्वसनीय विविधता के कारण भिन्न है। भारत का समाजशास्त्र इसको दर्शाता है।

यदि ऐसा है तो उस समय के यूरोप पर ध्यान केंद्रित क्यों किया जाए? वहाँ से शुरुआत करना क्यों प्रासंगिक है? जवाब अपेक्षाकृत आसान है। क्योंकि भारतीय होने के नाते हमारा अतीत अंग्रेज़ी पूँजीवाद और उपनिवेशवाद के इतिहास से गहरे जुड़ा हुआ है। पश्चिम में पूँजीवाद विश्वव्यापी विस्तार पा गया था। नीचे बॉक्स में दिया गया उद्धरण यह दर्शाता

पूँजीवाद और इसके द्वारा वैश्विक तौर पर समाजों का असमान रूपांतरण

सत्रहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में लगभग 24 मिलियन अफ्रीकियों को दास बनाया गया था, जिनमें से 11 मिलियन अमरीका तक की यात्रा में जीवित रहे। यह आधुनिक इतिहास में दिखने वाले जनसंख्या के बहुत बड़े आंदोलनों में से एक है। उनको अपनी ज़मीन और संस्कृति से उखाड़ा गया और दुनिया भर में अलग-अलग हिस्सों में भयावह परिस्थितियों में भेजा गया और पूँजीवाद की सेवा के कार्य में लगा दिया गया। दास प्रथा इस बात का एक प्रत्यक्ष उदाहरण है कि किस प्रकार लोगों को आधुनिकता के विकास के नाम पर उनकी मर्ज़ी के खिलाफ़ फँसाया गया। दासता की संस्था उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में कम होने लगी। लेकिन हमारे लिए भारत में यह 1800 के बाद का काल था जब बंधुआ मज़दूरों को अंग्रेज़ों द्वारा जहाज़ों में भरकर दूरस्थ देशों, जैसे दक्षिण अमेरिका में सूरीनाम अथवा वेस्टइंडीज़ अथवा फिजी द्वीपों, में उनकी सूती कपड़े की मिलों और चीनी कारखानों को चलाने के लिए ले जाया गया। एक प्रसिद्ध अंग्रेज़ी लेखक वी.एस. नायपॉल, जिनको नोबल पुरस्कार भी दिया गया, उन हज़ारों लोगों में से एक के वंशज हैं जिन्हें ज़बरदस्ती उन अनजान जगहों पर ले जाया गया जो उन्होनें कभी नहीं देखी थीं और जहाँ से लौटने में वे असमर्थ थे और वहीं मर गए।

है कि किस प्रकार पश्चिमी पूँजीवाद ने दो छोरों पर संसार को प्रभावित किया था।

आर.के. लक्ष्मण द्वारा प्रस्तुत मॉरीशस का यात्रा विवरण हमें बीते हुए औपनिवेशिक और वैश्विक अतीत की याद दिलाता है—

> यहाँ अफ्रीकी और चीनी, बिहारी और डच, पारसी और तमिल, अरबी, फ्राँसीसी और अंग्रेज़ सब एक दूसरे के साथ घुलमिल कर रहते हैं... उदाहरण के लिए, एक तमिल, जिसका भ्रामक-सा दक्षिण भारतीय चेहरा था और एक लुभावना-सा नाम भी था, राधाकृष्ण गोविंदन, सचमुच मद्रास से था। मैंने उससे तमिल में बात की। उसने मुझे फ्रेंच मिश्रित टूटी-फूटी इंगलिश में कठिनाई से जवाब देकर आश्चर्यचकित कर दिया। श्रीमान गोविंदन को तमिल का ज्ञान बिलकुल नहीं है और उनकी जिह्वा ने तमिल का उच्चारण करना शताब्दियों पहले बंद कर दिया है (लक्ष्मण 2003)!

9

भारत में समाजशास्त्र का विकास

उपनिवेशवाद आधुनिक पूँजीवाद एवं औद्योगीकरण का आवश्यक हिस्सा था। इसलिए पश्चिमी समाजशास्त्रियों का पूँजीवाद एवं आधुनिक समाज के अन्य पक्षों पर लिखित दस्तावेज़, भारत में हो रहे सामाजिक परिवर्तनों को समझने के लिए सर्वथा प्रासंगिक है। फिर भी जब हम शहरीकरण के संदर्भ में देखते हैं, उपनिवेशवाद में यह तथ्य निहित है कि आवश्यक नहीं है कि औद्योगीकरण का असर भारत में भी उतना ही था जितना पश्चिम में। कार्ल मार्क्स के ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रभाव को लेकर की गई टिप्पणियों से असमानता उजागर होती है—

> भारत जो पिछले काफ़ी समय से विश्व की एक महान कपास उत्पादन कार्यशाला थी, अब इंगलिश धागों और सूती सामान से भरा पड़ा था। इसके अपने उत्पादन को इंग्लैंड से बाहर निकालकर अथवा अत्यंत निर्मम शर्तों पर स्वीकार करके, अंग्रेज़ उत्पादकों को उनके उत्पादनों पर केवल थोड़ा और नाम मात्र शुल्क लगाकर, भारी मात्रा में यहाँ लाकर, स्वदेशी वस्त्र उद्योग को बरबाद कर दिया गया था, जो कभी शान हुआ करता था (मार्क्स 1853 देसाई 1975 में उद्धृत)।

भारत में समाजशास्त्र को भारतीय समाज के बारे में पश्चिमी लेखकों द्वारा लिखित दस्तावेज़ों और विचारों से भी जूझना पड़ता था जो हमेशा सही नहीं होते थे। ये विचार अंग्रेज़ औपनिवेशिक अधिकारियों और पश्चिमी विद्वानों दोनों द्वारा व्यक्त किए गए थे। उनमें से बहुतों के लिए भारतीय समाज पाश्चात्य समाज के एकदम विपरीत था। हम यहाँ केवल एक उदाहरण देते हैं कि एक भारतीय गाँव को किस तरह से समझा गया और अपरिवर्तनीय रूप में चित्रित किया गया।

समकालीन व विक्टोरिया कालीन विकास के विचारों से सहमति रखते हुए पाश्चात्य लेखकों ने भारतीय गाँव को अवशेष के रूप में देखा जिसे 'समाज की शैशवावस्था' कहा गया था। उन्होंनें उन्नीसवीं शताब्दी के भारत में यूरोपियन समाजों का अतीत देखा।

औपनिवेशिक विरासत वाले देशों, जैसे भारत में, एक दूसरा साक्ष्य यह था कि यहाँ समाजशास्त्र और सामाजिक मानवविज्ञान में प्राय: अंतर किया जाता था। एक स्तरीय पाश्चात्य पाठ्यपुस्तक में समाजशास्त्र की परिभाषा है, 'मानव समूहों और समाजों का अध्ययन, जिसमें औद्योगीकृत विश्व के विश्लेषण पर पर्याप्त बल दिया गया है' (गिडिंस 2001: 699)। सामाजिक मानवविज्ञान की एक स्तरीय पाश्चात्य परिभाषा इस प्रकार होगी, गैर-पश्चिमी साधारण समाजों अर्थात 'दूसरी' संस्कृतियों का अध्ययन। भारत में किस्सा सर्वथा अलग है। एम.एन. श्रीनिवास इसका खाका इस प्रकार खींचते हैं–

> भारत जैसे देश में, इसके आकार और विभिन्नता के चलते, क्षेत्रीय, भाषायी, धार्मिक, पंथ संबंधी, सजातीय (जाति के साथ) तथा ग्रामीण और शहरी इलाकों के बीच में असंख्य 'दूसरे' हैं... ऐसी संस्कृति और समाज में जैसा कि भारत में है, 'दूसरे' से आमना-सामना वास्तव में आस-पास या पड़ोस में ही हो जाता है...(श्रीनिवास 1966 : 205)।

भारत में इससे भी आगे सामाजिक मानवविज्ञान, जिसमें पहले 'आदिम लोगों' के अध्ययन ने स्थान ले रखा था, धीरे-धीरे बदलकर किसानों, सजातीय समूहों, सामाजिक वर्गों, प्राचीन सभ्यताओं के विभिन्न पक्षों और विशेषताओं एवं आधुनिक औद्योगिक समाजों के अध्ययन पर आ गया था। भारत में समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानवविज्ञान के बीच कोई स्पष्ट विभाजक रेखा नहीं है, जोकि बहुत सारे पाश्चात्य देशों में इन दोनों विषयों की एक विशेषता के रूप में मौजूद है। शायद भारत में पाई जाने वाली आधुनिक एवं ग्रामीण और महानगरीय और परंपरागत अति विभिन्नता ही इसकी वजह है।

10

समाजशास्त्र का विषय क्षेत्र एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों से इसके संबंध

समाजशास्त्रीय अध्ययन का विषय क्षेत्र काफ़ी व्यापक है। यह एक दुकानदार और ग्राहक के बीच, एक अध्यापक और विद्यार्थी के बीच, दो मित्रों के बीच अथवा परिवार के सदस्यों के बीच की अंत:क्रिया के विश्लेषण को अपना केंद्रबिंदु बना सकता है। इसी प्रकार यह राष्ट्रीय मुद्दों जैसे बेरोज़गारी या जातीय संघर्ष या सरकारी नीतियों का आदिवासी जनसंख्या के वनों पर अधिकार के प्रभाव या ग्रामीण कर्ज़ों को अपना केंद्रबिंदु बना सकता है। अथवा वैश्विक सामाजिक प्रक्रियाएँ जैसे, नए लचीले श्रम कानूनों का श्रमिक वर्ग पर प्रभाव या इलैक्ट्रॉनिक माध्यम का नौजवानों पर प्रभाव या विदेशी विश्वविद्यालयों के आगमन का देश की शिक्षा-प्रणाली पर प्रभाव की जाँच कर सकता है। इस प्रकार समाजशास्त्र विषय इससे परिभाषित नहीं होता कि वह क्या अध्ययन (अर्थात परिवार या व्यापार संघ अथवा गाँव) करता है बल्कि इससे परिभाषित होता है वह एक चयनित क्षेत्र का अध्ययन कैसे करता है।

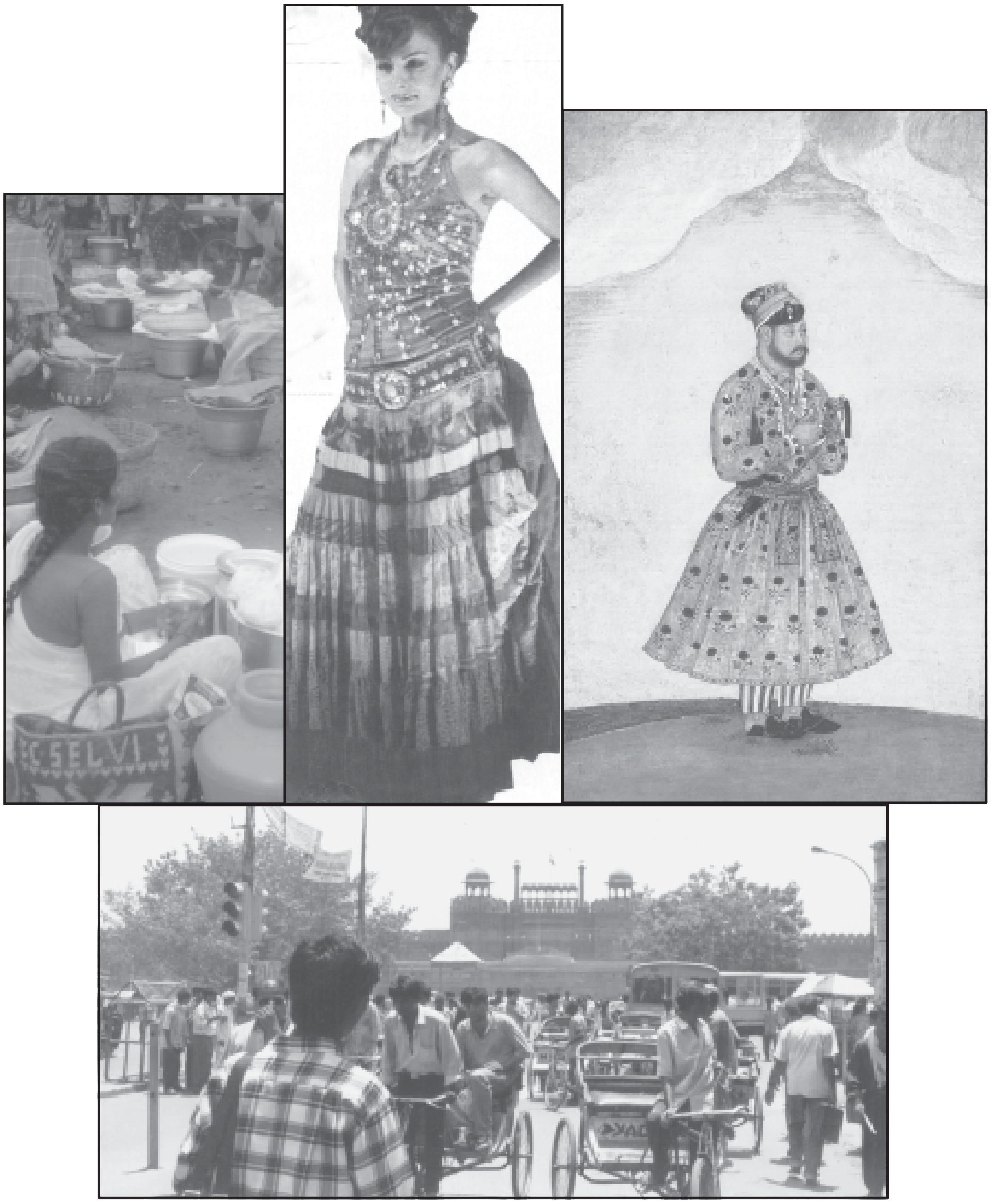

चर्चा कीजिए कि इतिहास, समाजशास्त्र, राजनीति विज्ञान एवं अर्थशास्त्र फ़ैशन / कपड़ों, बाज़ारों और शहर की गलियों का अध्ययन कैसे करेंगे

समाजशास्त्र समाजिक विज्ञानों के समूह का एक हिस्सा है जिसमें मानवविज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान एवं इतिहास शामिल हैं। विभिन्न सामाजिक विज्ञानों में विभाजन एकदम सुस्पष्ट नहीं है और सभी में कुछ हद तक साझी रुचियाँ, संकल्पनाएँ एवं पद्धतियाँ हैं। इसलिए यह समझा जाना ज़रूरी है, कि कुछ विषयों में पृथकता कुछ हद तक स्वैच्छिक है और इसका कठोरता से पालन नहीं होना चाहिए। सामाजिक विज्ञानों को अलग-अलग करना अंतरों को अतिरंजित करना और समानताओं पर आवरण चढ़ाने जैसा होगा। इससे भी बढ़कर नारी अधिकारवादी सिद्धांतों ने अंत:विषयक उपागम की अत्यधिक आवश्यकता को दिखाया है। उदाहरण के लिए, एक राजनीतिक विज्ञानी या अर्थशास्त्री लिंगों की भूमिका और उनके राजनीति पर प्रभाव अथवा परिवार के समाजशास्त्र के बगैर अर्थव्यवस्था या लिंग पर आधारित श्रम विभाजन का अध्ययन कैसे करेगा।

समाजशास्त्र एवं अर्थशास्त्र

अर्थशास्त्र वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन और वितरण का अध्ययन करता है। क्लासिकी आर्थिक उपागम पूर्णरूप से आर्थिक चरों के अंत:संबंधों का वर्णन करता है: कीमत, माँग एवं पूर्ति का संबंध; मुद्रा प्रवाह; आगत और निर्गत का अनुपात और इसी तरह अन्य। परंपरागत अर्थशास्त्र के अध्ययन का केंद्र 'आर्थिक क्रियाकलाप' के संकुचित दायरे तक रहा है, मुख्यत: किसी एक समाज में अपर्याप्त वस्तुओं एवं सेवाओं का वितरण। वे अर्थशास्त्री जो राजनीतिक आर्थिक उपागम से प्रभावित हैं, आर्थिक क्रियाकलापों को स्वामित्व के रूप में उत्पादन के साधनों के साथ संबंधों के विस्तृत दायरे में समझने का प्रयास करते हैं। आर्थिक विश्लेषण में प्रभावी प्रकृति का उद्देश्य किसी तरह से आर्थिक व्यवहार के सुनिश्चित कानूनों का निर्माण करना था।

समाजशास्त्रीय उपागम आर्थिक व्यवहार को सामाजिक मानकों, मूल्यों, व्यवहारों और हितों के व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखता है। निगमित क्षेत्र के प्रबंधक इस बात को जानते हैं। विज्ञापन उद्योग में भारी निवेश का सीधा संबंध उपभोग के तरीकों और जीवन-शैली को नया रूप देने की आवश्यकता से है। अर्थशास्त्र के अंदर की प्रवृत्तियाँ जैसे नारीवादी अर्थशास्त्र लिंग को समाज के केंद्रीय संगठनकारी सिद्धांत की तरह पेश कर दायरे को बढ़ाना चाहते हैं। उदाहरण के लिए वे यह देखेंगे कि किस प्रकार घर पर किया गया कार्य बाहर की उत्पादकता से जुड़ा हुआ है।

अर्थशास्त्र के परिभाषित विषय क्षेत्र ने इसको एक अत्यधिक केंद्रित और विचारशील विषय

क्रियाकलाप-7

- क्या आप सोचते हैं कि विज्ञापन वास्तव में लोगों के उपभोग के तरीकों को प्रभावित करते हैं?
- क्या आप यह सोचते हैं कि 'अच्छे जीवन' की जो परिभाषा है वह केवल आर्थिक रूप से ही परिभाषित है?
- क्या आप यह सोचते हैं कि 'खर्चे' और 'बचत' की आदतें सांस्कृतिक रूप से बनती हैं?

के रूप में सुविधाजनक तरीके से विकसित होने में मदद की है। समाजशास्त्री प्राय: अर्थशास्त्रियों से इस बात के लिए ईर्ष्या रखते हैं कि उनकी शब्दावली उचित होती हैं और उनकी माप एकदम सही होती है और उनके सैद्धांतिक कार्यों के परिणामों को व्यावहारिक सुझावों में परिणित करने की क्षमता से भी जिसका जनहित नीतियों के लिए बड़ा अर्थ होता है। फिर भी अर्थशास्त्री की पूर्वानुमान लगाने की योग्यता को प्राय: व्यक्तिगत व्यवहार, सांस्कृतिक मानकों एवं संस्थात्मक प्रतिरोध की अनदेखी करने की वजह से नुकसान उठाना पड़ता हैं जिसका अध्ययन समाजशास्त्री करते हैं। पियरे बोरद्यु ने 1998 में लिखा है–

> वास्तविक आर्थिक विज्ञान अर्थव्यवस्था की प्रत्येक लागतों पर ध्यान देगा–केवल निगमित निकायों से संबंधित लागतों पर ही नहीं, बल्कि अपराध, आत्महत्याओं और ऐसी ही अन्य लागतों पर भी।
>
> हमें खुशियों भरा ऐसा अर्थशास्त्र आगे लाना होगा जो सभी प्रकार के हितों का ध्यान रखेगा, व्यक्तिगत एवं सामूहिक, भौतिक एवं सांकेतिक, क्रियाकलापों से संबंधित (जैसे, सुरक्षा) और साथ ही निष्क्रियता या अनिश्चित रोज़गार से संबंधित भौतिक एवं प्रतीकात्मक लागतों का भी (उदाहरण के लिए दवाओं का उपभोग: शमनकारी दवाओं के इस्तेमाल का विश्व रिकार्ड फ्रांस के नाम है), (स्वेडबर्ग 2003 से उद्धृत)।

सामान्यत: समाजशास्त्र अर्थशास्त्र के विपरीत तकनीकी समाधान प्रस्तुत नहीं करता। बल्कि यह एक प्रश्नकारी एवं आलोचनात्मक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करता है। यह आधारभूत मान्यताओं के बारे में प्रश्न पूछने में सहायता करता है और इस प्रकार न केवल निर्धारित लक्ष्यों के तकनीकी साधनों के प्रति बल्कि स्वयं उद्देश्य की सामाजिक अपेक्षाओं के प्रति भी चर्चा का अवसर प्रदान करता है। हाल ही में आर्थिक समाजशास्त्र में पुनरुत्थान की प्रवृत्ति देखने में आई है जिसका कारण शायद समाजशास्त्र का विशालतर और आलोचनात्मक दृष्टिकोण है।

समाजशास्त्र किसी सामाजिक स्थिति की पहले से विद्यमान समझ को ज़्यादा स्पष्ट और पर्याप्त समझ प्रदान करता है। यह तथ्यों की जानकारी के स्तर पर अथवा किसी चीज़ के घटित होने के कारण को बेहतर तरीके से समझने के स्तर पर हो सकते हैं (दूसरे शब्दों में, सैद्धांतिक समझ के द्वारा)।

समाजशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान

जैसाकि अर्थशास्त्र में है, वैसे ही समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच भी पद्धतियों और उपागमों की परस्पर अंत:क्रिया की बहुलता है। परंपरागत राजनीति विज्ञान मुख्यत: दो तत्त्वों पर केंद्रित था–राजनीतिक सिद्धांत और सरकारी प्रशासन। दोनों में से किसी भी शाखा में राजनीतिक व्यवहार गहन रूप में शामिल नहीं है। समान्यत: सैद्धांतिक भाग में प्लेटो से लेकर मार्क्स तक के सरकार संबंधी विचारों को केंद्रबिंदु बनाया गया

क्रियाकलाप-8

पिछले आम चुनाव में किए गए अध्ययन के प्रकारों की जानकारी प्राप्त कीजिए। संभवत: आप उनमें राजनीति विज्ञान और समाजशास्त्र दोनों के लक्षण पाएँगे। चर्चा कीजिए कैसे विभिन्न विषय आपस में अंत:क्रिया करते हैं और परस्पर प्रभाव डालते हैं।

है जबकि प्रशासनिक भाग का केंद्रबिंदु सरकार के वास्तविक संचालन की तुलना में इसका औपचारिक ढाँचा रहा है।

समाजशास्त्र समाज के सभी पक्षों के अध्ययन को समर्पित है जबकि परंपरागत राजनीति विज्ञान ने अपने को शक्ति के औपचारिक संगठन के साकार रूप में अध्ययन तक सीमित रखा। समाजशास्त्र सरकार सहित संस्थाओं के समुच्चय के बीच अंत:संबंधों पर बल देता है जबकि राजनीति विज्ञान सरकार में विद्यमान प्रक्रियाओं पर ध्यान देता है।

हालाँकि समाजशास्त्र की अनुसंधान में समान रुचि को लेकर राजनीति विज्ञान से लंबी साझेदारी है। मैक्स बेवर जैसे समाजशास्त्री ने ऐसा काम किया है जिसको राजनीतिक समाजशास्त्र का नाम दिया जा सकता है। राजनीतिक समाजशास्त्र का केंद्र राजनीतिक व्यवहार के वास्तविक अध्ययन के रूप में बढ़ता जा रहा है। पिछले कुछ भारतीय चुनावों में भी मतदान के राजनीतिक प्रतिमानों का काफ़ी विशिष्ट अध्ययन देखने में आया है। राजनीतिक संगठनों की सदस्यता, संगठनों में निर्णय लेने की प्रक्रिया, राजनीतिक दलों के समर्थन के समाजशास्त्रीय कारण, राजनीति में लिंग की भूमिका आदि का भी अध्ययन किया जाता रहा है।

समाजशास्त्र एवं इतिहास

इतिहासकार एक तरह से नियम के मुताबिक अतीत का अध्ययन करते हैं, जबकि समाजशास्त्री समकालीन समय या कुछ ही पहले के अतीत में ज़्यादा रुचि रखते हैं। इतिहासकार पहले वास्तविक घटनाओं के चित्रण में एवं चीज़ें वास्तव में कैसे घटित हुईं इसे स्थापित करने में सतुंष्ट होते थे, जबकि समाजशास्त्र में असामयिक संबंधों को स्थापित करने पर ध्यान केंद्रित था।

इतिहास ठोस विवरणों का अध्ययन करता है, जबकि समाजशास्त्री ठोस वास्तविकताओं से सार निकालकर उनका वर्गीकरण एवं सामान्यीकरण करता है। आजकल इतिहासकार अपने विश्लेषण में समाजशास्त्रीय पद्धतियों एवं धारणाओं का प्रयोग करने में बराबर शामिल रहते हैं।

परंपरागत इतिहास राजाओं और युद्धों के इतिहास के बारे में रहा है। इतिहासकारों द्वारा अपेक्षाकृत कम चकाचौंध और कम रोमांचक घटनाओं जैसे ज़मीन के संबंधों में परिवर्तन या परिवार में लिंग संबंध के इतिहास का अध्ययन परंपरागत रूप में कम ही हुआ है लेकिन यही

क्रियाकलाप-9

जानकारी प्राप्त कीजिए कि इतिहासकारों ने कला, क्रिकेट, कपड़े, फ़ैशन, वास्तुकला एवं भवन विन्यास के इतिहास के बारे में किस प्रकार लिखा है।

बात समाजशास्त्रियों की रुचि का प्रमुख क्षेत्र बनी। हालाँकि आजकल इतिहास काफ़ी हद तक समाजशास्त्रीय हो गया है और सामाजिक इतिहास तो इतिहास की विषय-वस्तु है। यह शासकों के कार्यों, युद्ध एवं राजतंत्रवाद के बजाय सामाजिक प्रतिमानों, लिंग संबंधों, लोकाचार, प्रथाओं एवं प्रमुख संस्थाओं का अध्ययन करता है।

समाजशास्त्र एवं मनोविज्ञान

मनोविज्ञान को प्राय: व्यवहार के विज्ञान के रूप में परिभाषित किया जाता है। यह मुख्यत: व्यक्ति से संबंधित है। यह उसकी बौद्धिकता एवं सीखने की प्रवृत्ति, अभिप्रेरणाओं एवं याद्दाश्त, तंत्रिका प्रणाली एवं प्रतिक्रिया का समय, आशाओं और डर में रुचि रखता है। सामाजिक मनोविज्ञान, जो समाजशास्त्र और मनोविज्ञान के बीच एक पुल का कार्य करता है, अपनी प्राथमिक रुचि एक व्यक्ति में रखता है लेकिन उसका इस बात से सरोकार रहता है कि व्यक्ति किस प्रकार सामाजिक समूहों में सामूहिक तौर पर अन्य व्यक्तियों के साथ व्यवहार करता है।

समाजशास्त्र समाज में संगठित व्यवहार को समझने में प्रयासरत रहता है। यही वह तरीका है जिसके द्वारा समाज के विभिन्न पक्षों द्वारा व्यक्तित्व को आकार मिलता है, उदाहरण के लिए, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था, उनका परिवार और नातेदारी संरचना, उनकी संस्कृति, मानक एवं मूल्य। यह याद करना रुचिकर होगा कि दुर्खाइम जिन्होंने आत्महत्या के अपने प्रख्यात अध्ययन में समाजशास्त्र में स्पष्ट पद्धति एवं विषय क्षेत्र को स्थापित करने की चेष्टा की, इसमें उन्होंनें उन व्यक्तियों की व्यक्तिगत उत्कंठाओं को बाहर ही रखा जिन्होंने आत्महत्या की या इसकी चेष्टा की। यह उस सांख्यिकीय आँकड़ें के लिए किया गया जो उन व्यक्तियों की कई सामाजिक विशेषताओं से सरोकार रखते थे।

समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानवविज्ञान

अधिकांश देशों में मानवविज्ञान में पुरातत्व विज्ञान, भौतिक मानवविज्ञान, सांस्कृतिक इतिहास, भाषा की विभिन्न शाखाएँ और 'सामान्य समाजों' में जीवन के सभी पक्षों का अध्ययन शामिल है। यहाँ हमारा सरोकार सामाजिक मानवविज्ञान और सांस्कृतिक मानवविज्ञान से है क्योंकि यह समाजशाास्त्र के अध्ययन के एकदम निकट है। समाजशाास्त्र को आधुनिक, जटिल समाजों का अध्ययन समझा जाता है जबकि सामाजिक मानवविज्ञान को सरल समाजों का अध्ययन समझा जाता है।

हमने पहले देखा है कि प्रत्येक विषय का अपना इतिहास अथवा जीवनी होती है। सामाजिक मानवविज्ञान का विकास पश्चिम में उन दिनों हुआ जब यह माना जाता था कि पश्चिमी शिक्षित सामाजिक मानवविज्ञानियों ने गैर-यूरोपियन समाजों का अध्ययन किया जिनको प्राय: विजातीय, अशिष्ट और असभ्य समझा जाता था। जिनका अध्ययन किया गया और जिनका अध्ययन नहीं किया गया था, उनके बीच के असमान संबंध पर ज़्यादा टिप्पणी नहीं की गई। लेकिन अब समय बदल गया

असम में चाय पत्ती तोड़ने वाले श्रमिक

है और अब वे 'मूल निवासी' विद्यमान हैं, चाहे वे भारतीय हैं या सूडानी, नागा हैं या संथाल, जो अब अपने समाजों के बारे में बोलते हैं और लिखते हैं। अतीत के मानवविज्ञानियों ने सरल समाजों का विवरण तटस्थ वैज्ञानिक तरीके से लिखा था। प्रत्यक्ष व्यवहार में वे लगातार उन समाजों की तुलना आधुनिक पश्चिमी समाजों से करते रहे थे, जिसे वे एक मानदंड के रूप में देखते थे।

अन्य परिवर्तनों ने भी समाजशास्त्र और सामाजिक मानवविज्ञान की प्रकृति को पुनः परिभाषित किया है। जैसा कि हमने देखा आधुनिकता ने एक ऐसी प्रक्रिया की शुरुआत की जिसमें छोटे से छोटा गाँव भी वैश्विक प्रक्रियाओं से प्रभावित हुआ। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है–उपनिवेशवाद। ब्रिटिश उपनिवेशवाद में भारत के अत्यधिक दूरस्थ गाँवों ने भी अपने प्रशासन और भूमि कानूनों में परिवर्तन, अपने राजस्व उगाही में परिवर्तन और अपने उत्पादक उद्योग को समाप्त होते हुए देखा था। समकालीन वैश्विक प्रक्रियाओं ने 'दुनिया के इस प्रकार सिकुड़ने' को और ज़्यादा बल प्रदान किया है। एक सरल समाज का अध्ययन करते समय ये मान्यता थी कि यह एक सीमित समाज था। हम जानते हैं कि आज ऐसा नहीं है।

क्रियाकलाप-10

- मालूम कीजिए कि असम के चाय बागानों में काम करने वाले संथाल जाति के श्रमिकों के पूर्वज भारत में कहाँ से आए थे।
- असम में चाय की खेती की शुरुआत कब हुई?
- क्या अंग्रेज़ उपनिवेशवाद से पहले चाय पीते थे?

सामाजिक मानवविज्ञान द्वारा सरल व निरक्षर समाजों पर किए गए परंपरागत अध्ययन का प्रभाव मानवविज्ञान की विषय वस्तु और विषय सामग्री पर पड़ा। सामाजिक मानवविज्ञान की प्रवृत्ति समाज (सरल समाज) के सभी पक्षों का एक समग्र में अध्ययन करने की होती थी। अभी तक जो विशेषज्ञता प्राप्त हुई है वह क्षेत्र पर आधारित थी उदाहरण के लिए अंडमान द्वीप समूह, नूअर अथवा मेलैनेसिया। समाजशास्त्री जटिल समाजों का अध्ययन करते हैं, अत: समाज के भागों जैसे नौकरशाही या धर्म या जाति या एक प्रक्रिया जैसे सामाजिक गतिशीलता पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

सामाजिक मानवविज्ञान की विशेषताएँ थीं, लंबी क्षेत्रीय कार्य परंपरा, समुदाय जिसका अध्ययन किया उसमें रहना और अनुसंधान की नृजाति पद्धतियों का उपयोग। समाजशास्त्री प्राय: सांख्यिकी एवं प्रश्नावली विधि का प्रयोग करते हुए सर्वेक्षण पद्धति एवं संख्यात्मक आँकड़ों पर निर्भर करते हैं। 5वें अध्याय में आप इन परंपराओं के बारे में और ज़्यादा विस्तार से जान पाएँगे।

आज एक सरल और जटिल समाज में अंतर को स्वयं एक बड़े पुनर्विचार की आवश्यकता है। भारत स्वयं परंपरा और आधुनिकता का, गाँव और शहर का, जाति और जनजाति का, वर्ग एवं समुदाय का एक जटिल मिश्रण है। गाँव राजधानी दिल्ली के बीचों-बीच निवास करते हैं। कॉल सेंटर देश के विभिन्न कस्बों से यूरोपीय और अमेरिकी ग्राहकों की सेवा करते हैं।

भारतीय समाजशास्त्र दोनों परंपराओं से सार ग्रहण करने में काफ़ी उदार रहा है। भारतीय समाजशास्त्री अकसर भारतीय समाजों के अध्ययन में केवल अपनी संस्कृति का नहीं बल्कि उनका भी अध्ययन करते हैं जो उनकी संस्कृति का हिस्सा नहीं है। यह शहरी आधुनिक भारत के जटिल अंतर करने वाले समाजों के साथ-साथ जनजातियों का भी एक समग्र रूप में अध्ययन कर सकता है।

इस बात का डर बना रहता था कि सरल समाजों के खत्म होने से सामाजिक मानवविज्ञान अपनी विशिष्टता खो देगा और समाजशास्त्र में मिल जाएगा। हालाँकि दोनों विषयों में लाभदायक अंत:परिवर्तन हुए हैं और आजकल पद्धतियों एवं तकनीकों को दोनों विषयों से लिया जाता है। राज्य और वैश्वीकरण के मानवविज्ञानी अध्ययन किए गए हैं जोकि सामाजिक मानवविज्ञान की परंपरागत विषय-वस्तु से एकदम अलग हैं। दूसरी और समाजशास्त्र भी आधुनिक समाजों की जटिलताओं के अध्ययन के लिए संख्यात्मक एवं गुणात्मक तकनीकों, समष्टि और व्यष्टि उपागमों का उपयोग करता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है हम इस पर चर्चा 5वें अध्याय में भी जारी रखेंगे। क्योंकि भारत में समाजशास्त्र और सामाजिक मानवविज्ञान में अति निकट का संबंध रहा है।

शब्दावली

पूँजीवाद–आर्थिक उद्यम की एक व्यवस्था, जोकि बाज़ार विनिमय पर आधारित है। 'पूँजी' से आशय है कोई संपत्ति, जिसमें धन, भवन एवं मशीनें आदि शामिल हैं, जो बिक्री के लिए वस्तुओं के उत्पादन में उपयोग की जाती हैं अथवा बाज़ार में लाभ कमाने के उद्देश्य से विनियोग की जा सकती हैं। यह व्यवस्था उत्पादन के साधनों और संपत्तियों के निजी स्वामित्व पर आधारित है।

द्वंद्वात्मक–सामाजिक ताकतों के विरोध की क्रिया या उनकी विद्यमानता जैसे, सामाजिक बाध्यता और व्यक्तिगत इच्छा।

आनुभविक अन्वेषण–समाजशास्त्रीय अध्ययन में दिए गए किसी भी क्षेत्र में की जाने वाली तथ्यपरक जाँच।

नारीवादी सिद्धांत–एक समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण जो सामाजिक विश्व का विश्लेषण करते समय लिंग की महत्ता को केंद्र में रखने पर बल देता है। यद्यपि इस सिद्धांत के कई तत्त्व हैं लेकिन उन सबका एक सरोकार है–समाज में लिंग के आधार पर होने वाली असमानता की व्याख्या करना एवं उसे दूर करने के लिए कार्य करना।

समष्टि समाजशास्त्र–बड़े समूहों, संगठनों अथवा सामाजिक व्यवस्थाओं का अध्ययन।

व्यष्टि समाजशास्त्र–आमने-सामने की अंत:क्रिया के संदर्भ में मानव व्यवहार का अध्ययन।

सामाजिक बाध्यता–एक शब्द जो इस तथ्य को दर्शाता है कि हम जिन समूहों और समाजों के हिस्से है वे हमारे व्यवहार को अनुकूलता के हिसाब से प्रभावित करते हैं।

मूल्य–व्यक्ति या समूहों द्वारा माना जाने वाला विचार कि क्या ज़रूरी है, सही है, अच्छा है या बुरा। विभिन्न मूल्य मानव संस्कृति की विभिन्नता के मुख्य पक्षों को दर्शाते हैं।

अभ्यास

1. समाजशास्त्र के उद्गम और विकास का अध्ययन क्यों महत्त्वपूर्ण है?
2. 'समाज' शब्द के विभिन्न पक्षों की चर्चा कीजिए। यह आपके सामान्य बौद्धिक ज्ञान की समझ से किस प्रकार अलग है?
3. चर्चा कीजिए कि आजकल अलग-अलग विषयों में परस्पर लेन-देन कितना ज़्यादा है।
4. अपनी या अपने दोस्त अथवा रिश्तेदार की किसी व्यक्तिगत समस्या को चिह्नित कीजिए। इसे समाजशास्त्रीय समझ द्वारा जानने की कोशिश कीजिए।

सहायक पुस्तकें

बर्जर, पीटर एल. 1963. *इनवीटेशन टू सोशियोलॉजी : ए ह्यूमनिस्टिक पर्सपेक्टिव.* पेंगुइन, हारमंडस्वर्थ।

बियरस्टेड, रॉबर्ट. 1970. *सोशल ऑर्डर*. टाटा मैग्रा–हिल पब्लिशिंग कं. लिमिटेड, मुंबई।

बॉटोमोर, टाम. 1962. *सोशियोलॉजी : ए गाइड टू प्रॉब्लम्स एंड लिटरेचर.* जार्ज, ऐलन एंड अनविन, लंदन।

चौधरी, मैत्रेयी. 2003. *द प्रैक्टिस ऑफ सोशियोलॉजी.* ओरियेंट लोंगमैन, नयी दिल्ली।

देसाई, ए.आर. 1975. *सोशल बैकग्राऊंड ऑफ इंडियन नैशनलिज़्म.* पॉपुलर प्रकाशन, मुंबई।

दुबे, एस.सी. 1977. *अंडरस्टैंडिंग सोसायटी : सोशियोलॉजी : द डिसिप्लिन एंड इट्स सिग्नीफ़िकेंस :* पार्ट I. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली।

फ्रीमैन, जेम्स एम. 1978. 'कलैक्टिंग द लाइफ हिस्ट्री ऑफ एन इंडियन अनटचेबल', वातुक, सिलविया. (सं.), *अमेरिकन स्टडीज़ इन द ऐंथ्रोपोलॉजी ऑफ इंडिया.* मनोहर पब्लिशर्स, दिल्ली।

गिडिंस, एंथोनी. 2001. *सोशियोलॉजी.* चतुर्थ संस्करण, पोलिटी प्रेस, कैंब्रिज।

इंकल्स, एलैक्स. 1964. *वाट इज़ सोशियोलॉजी? एन इंट्रोडक्शन टू द डिसिप्लिन एंड प्रोफैशन.* प्रिंटिस हाल, न्यू जर्सी।

जयराम, एन. 1987. *इंट्रोडक्टरी सोशियोलॉजी*. मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, दिल्ली।

लक्ष्मण, आर.के. 2003. द *डिस्टॉरटेड मिरर*. पेंगुइन, दिल्ली।

मिल्स, सी. राइट. 1959. द *सोशियोलॉजीकल इमेजिनेशन.* पेंगुइन, हारमंडस्वर्थ।

सिंह, योगेंद्र. 2004. *आइडियोलॉजी एंड थ्योरी इन इंडियन सोशियोलॉजी.* रावत पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली।

श्रीनिवास, एम.एन. 2002. *विलेज, कास्ट, जेंडर एंड मैथड : ऐसेज़ इन इंडियन सोशल एंथ्रोपोलॉजी.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली।

स्वेडबर्ग, रिचर्ड. 2003. *प्रिंसिपल्स ऑफ इकोनोमिक सोशियोलॉजी.* प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, प्रिंसटन एंड ऑक्सफोर्ड।